डिफॉल्ट बेल

प्रिलिम्स के लिये:

अनुच्छेद 21, राष्ट्रीय जांच एजेंसी, सर्वोच्च न्यायालय

मेन्स के लिये:

डिफॉल्ट बेल एवं गिरफ्तारी से संबंधित संवैधानिक प्रावधान

चर्चा में क्यों?

हाल ही में [राष्ट्रीय जाँच एजेंसी](#) (National Investigation Agency-NIA) ने बॉम्बे सर्वोच्च न्यायालय के उस आदेश के खिलाफ अपील दायर की गई है जिसमे वकील-कार्यकर्त्ता सुधा भारद्वाज को डिफॉल्ट/वैधानिक जमानत (Statutory Bail) दी गई थी।

- जमानत कानूनी हिरासत में रखे गए व्यक्ति की सशर्त/अंतरिम रिहाई है (ऐसे मामलों में जिन पर अभी न्यायालय द्वारा निर्णय दिया जाना बाकी हो) जिसमें उस व्यक्ति द्वारा आवश्यकता पड़ने पर अदालत में पेश होने का वादा किया जाता है।

प्रमुख बिंदु

- **डिफॉल्ट बेल के बारे में:**
  - **कानूनी स्रोत:** यह ज़मानत का अधिकार है जो तब प्राप्त होता है जब पुलिस न्यायिक हिरासत में लिये किसी व्यक्ति के संबंध में एक निर्दिष्ट अवधि के भीतर जाँच पूरी करने में विफल रहती है।
    - इसे वैधानिक जमानत के रूप में भी जाना जाता है।
    - यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) में निहित है।
  - **सर्वोच्च न्यायालय का फैसला:** वर्ष 2020 में **बिक्रमजीत सिंह मामले** , में [सर्वोच्च न्यायालय](#) द्वारा देखा गया कि आरोपी को **'डिफॉल्ट जमानत'** का एक अपरिहार्य अधिकार प्राप्त है, यदि उसके द्वारा किसी अपराध की जांच के लिये अधिकतम अवधि समाप्त होने के बाद और चार्जशीट दायर करने से पहले आवेदन किया करता है।
    - CrPC की धारा 167 (2) के तहत डिफॉल्ट जमानत का अधिकार, न केवल एक वैधानिक अधिकार, बल्कि [अनुच्छेद 21](#) के तहत कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया का हिस्सा भी है।
  - **अंतर्निहित सिद्धांत:** सामान्य तौर पर, जाँच एजेंसी की चूक पर जमानत के अधिकार को '**अपरिहार्य अधिकार**' माना जाता है, लेकिन उचित समय पर इसका लाभ उठाया जाना चाहिये।
    - डिफॉल्ट बेल एक अधिकार है जिसमें अपराध की प्रकृति को बेल का आधार न माना जाता है।
    - इसकी निर्धारित अवधि जिसके भीतर आरोप पत्र दायर किया जाना है, उस दिन से शुरू होती है तथा जब आरोपी को पहली बार रिमांड पर लिया जाता है तब तक होती है।
    - CrPC की धारा 173 के तहत, पुलिस अधिकारी किसी अपराध की आवश्यक जाँच पूरी होने के बाद रिपोर्ट दर्ज़ करने के लिये बाध्य है। इस रिपोर्ट को आम बोलचाल की भाषा में चार्जशीट (Charge Sheet) कहा जाता है।
  - **समय अवधि: डिफॉल्ट बेल/जमानत का मुद्दा वहाँ उठता है जहाँ पुलिस के लिये 24 घंटे में जाँच पूरी करना संभव नहीं है, पुलिस संदिग्ध को अदालत में पेश करती है और पुलिस न्यायिक हिरासत के लिये आदेश माँगती है।**
    - अधिकांश अपराधों के लिये, पुलिस के पास जाँच पूरी करने और न्यायालय के समक्ष अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने हेतु 60 दिनों का समय होता है।
    - हालाँकि जहाँ अपराध में मौत की सजा या आजीवन कारावास, या कम से कम 10 साल की जेल की सजा होती है, वहाँ यह अवधि 90 दिन है।
    - दूसरे शब्दों में एक मजिस्ट्रेट किसी व्यक्ति की न्यायिक रिमांड के लिये 60-या 90-दिन की सीमा से अधिक अधिकृत नहीं कर सकता है।
    - इस अवधि के अंत में, यदि जाँच पूरी नहीं होती है, तो न्यायालय उस व्यक्ति को रिहा कर देगी "यदि वह जमानत देने के लिये तैयार है और स्वयं को प्रस्तुत करता है"।

- **विशेष मामले:** 60 या 90 दिन की सीमा केवल सामान्य दंड कानून के लिये है। विशेष अधिनियम (Special Enactments) पुलिस को जाँच पूरी करने में अधिक छूट देते हैं।
    - नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट 1985 में, यह अवधि 180 दिन है, जिसे एक वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है।
    - **गैर-कानूनी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम 1967** में, डिफॉल्ट सीमा केवल 90 दिन है, जिसे और 90 दिनों तक बढ़ाया जा सकता है।
    - इसका विस्तार केवल **लोक अभियोजक** (Public Prosecutor) द्वारा एक रिपोर्ट के आधार पर किया सकता है जिसमें जांच में की गई प्रगति का संकेत दिया गया हो और आरोपी को निरंतर हिरासत में रखने के कारण बताए गए हों।
    - इन प्रावधानों से पता चलता है कि डिफॉल्ट बेल की अवधि का विस्तार नहीं किया जा सकता है बल्कि इसके लिये न्यायिक आदेश की आवश्यकता होती है।

भारत में अन्य प्रकार की ज़मानत:

- **अग्रिम जमानत:** यह न्यायालय (देश के भीतर किसी भी न्यायालय) द्वारा एक ऐसे व्यक्ति को रिहा करने का निर्देश है जो पहले से ही गिरफ्तार किया गया है और पुलिस हिरासत में रखा गया है। ऐसी जमानत के लिये व्यक्ति सीआरपीसी की धारा 437 और 439 के तहत आवेदन कर सकता है।
- **अंतरिम जमानत:** न्यायालय द्वारा एक अस्थायी और छोटी अवधि के लिये ज़मानत दी जाती है जब तक कि अग्रिम ज़मानत या नियमित ज़मानत की मांग करने वाला आवेदन न्यायालय के समक्ष लंबित न हो।
- **अग्रिम जमानत:** किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किये जाने से पहले ही जमानत पर रिहा करने का निर्देश जारी किया जाता है। ऐसे में गिरफ्तारी की आशंका बनी रहती है और जमानत मिलने से पहले व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जाता है।
    - ऐसी जमानत के लिये कोई व्यक्ति दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) की धारा 438 के तहत आवेदन दाखिल कर सकता है। यह केवल सत्र न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा जारी की जाती है।

गिरफ्तारी से संबंधित संवैधानिक प्रावधान:

- अनुच्छेद 22 गिरफ्तार या हिरासत (निरोध) में लिये गए व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करता है। निरोध दो प्रकार का होता है- दंडात्मक और निवारक।
    - दंडात्मक निरोध का आशय किसी व्यक्ति को उसके द्वारा किये गए अपराध के लिये अदालत में मुकदमे और दोषसिद्धि के बाद दंडित करने से है।
    - वहीं दूसरी ओर, निवारक निरोध का अर्थ किसी व्यक्ति को बिना किसी मुकदमे और अदालत द्वारा दोषसिद्धि के हिरासत में लेने से है।
- अनुच्छेद 22 के दो भाग हैं- पहला भाग साधारण कानून के मामलों से संबंधित है और दूसरा भाग निवारक निरोध कानून के मामलों से संबंधित है।

दंडात्मक निरोध के तहत दिये गए अधिकार	निवारक निरोध के तहत दिये गए अधिकार
▪ गिरफ्तारी के आधार के बारे में सूचित करने का अधिकार।	▪ किसी व्यक्ति की नज़रबंदी तीन महीने से अधिक नहीं हो सकती जब तक कि एक सलाहकार बोर्ड विस्तारित नज़रबंदी हेतु पर्याप्त कारण प्रस्तुत नहीं करता है। ▪ बोर्ड में एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश शामिल होते हैं।
▪ एक विधि पेशेवर से परामर्श करने और बचाव करने का अधिकार।	▪ नज़रबंदी के आधारों के बारे में नज़रबंद व्यक्ति को सूचित किया जाना चाहिये। ▪ तथापि जनहित के विरुद्ध माने जाने वाले तथ्यों को प्रकट करने की आवश्यकता नहीं है।
▪ यात्रा के समय को छोड़कर 24 घंटे के भीतर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश होने का अधिकार।	▪ बंदी को निरोध आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का अवसर दिया जाना चाहिये।
▪ 24 घंटे के बाद रिहा होने का अधिकार जब तक कि मजिस्ट्रेट आगे की हिरासत के लिये अधिकृत नहीं करता।	
▪ ये सुरक्षा उपाय किसी विदेशी शत्रु के लिये उपलब्ध नहीं हैं।	▪ यह सुरक्षा नागरिकों के साथ-साथ बाह्य व्यक्ति दोनों के लिये उपलब्ध है।

स्रोत-द हिंदू

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/default-bail